भारतीय राजनीति में नारी

राजेन्द्र प्रसाद गुप्ता
U.G.C. NET, J.R.F and Research Scholor

राजनीतिक भागीदारी लोकतांत्रिक ढ़ांचे की अनिवार्य विशेषता है। लोकतंत्र की प्रकृति, सफलता ओर प्रभावोत्पादकता काफी हद तक इस बात निर्भर करती है कि व्यवस्था अपने सभी नागरिकों को समान, प्रभावी और वास्तविक भागीदारी के अवसर किस सीमा तक उपलब्ध कराती है। देश की नागरिक आबादी और मतदाताओं का आधा हिस्सा महिलाओं से बनता है, फिर भी वे अपने प्राप्य से वंचित है। अगर महिलाओं को निर्णय लेने में हर स्तर पर उचित भागीदारी नहीं मिलती है, तो हमारा लोकतंत्र आधा–आधूरा ही माना जायेगा। भारत में महिलायें मतदाता समूह की सदस्य तो है लेकिन राजनीतिक भागीदारी और राजनीतिक सत्ता प्राप्ति की दृष्टि से उन्हे दूसरे दर्जे का नागरिक माना जाता है। उनकी काफी बड़ी संख्या राजनीति के प्रति निष्क्रिय और उदासीन रहती है।

राजनीति में महिलाओं की भागीदारी के मसले को समाज में उनकी स्थिति में अलग करके नहीं देखा जा सकता। ऐतिहासिक दृष्टि से माना जाता है कि समाज की परम्पराओं, मूल्यों और मानदंडो का निर्वाह महिलायें ही करती है। अपने परिवारों में वे जिस सामाजिक ढ़ांचे में ढ़ल जाती है, वह उन्हे गैर–पारम्परिक भूमिकायें निभाने योग्य नही बनाता।

अगर हम भारतीय इतिहास के गलियारों में विचरे तो पायेंगे कि प्राचीन भारत में नारी की मातृ छवि को सम्मानित किया गया। नारी को 'शक्ति रूपा' माना गया उस समय लोगो में यह सामान्य विश्वास था कि जहां नारी का सम्मान होता है वहां देवता निवास करते है। ऋग्वैदिक भारत में महिलाओं की सामाजिक स्थिति बेहतर थी और उन्हे पुरुषों के समान अधिकार प्राप्त थे। समाज में होने वाले कतिपय आन्तरिक परिवर्तनो के कारण महिलाओं की स्थिति में निरन्तर हास होता गया। मध्यकाल एक ऐसा दौर था जिसमें सामान्य तौर पर नारी की स्थिति दयनीय थी लेकिन कुछ ऐसी भी महिलायें थी जिन्होंने सम्मान एवं सत्ता प्राप्त होने पर स्वयं को कुशल प्रशासक सिद्ध किया। इसी युग में दिद्दा, पद्मिनी रानीकर्णवती, कूर्मादेवी और रानी दुर्गावती जैसी महान राजपूत महिलाओं का उल्लेख मिलता है।

मध्यकाल में मुस्लिम शासन के आगमन के साथ नारी की स्थिति में ह्रास हुआ। मुसलमानों में पर्दाप्रथा का कड़ाई से पालन किये जाने के बावजूद शाही घरानों की मुस्लिम महिलायें सामाजिक–राजनीतिक गतिविधियों में काफी सक्रिय रही। गुलवदन वेगम, जहाँआरा, रजिया सुल्तान, नूरजहाँ, हजरत महल, चाँदबीबी ऐसी ही कुछ ख्याति प्राप्ति महिलायें थी। 17वीं और 18वीं शताब्दी में मराठो में इस परम्परा को देखा गया। राजपरिवारों से सम्बन्धित जीजाबाई, ताराबाई आदि मराठा महिलाएँ कुशल प्रशासक थी। 19वीं सदी के सुधारवादी आन्दोलन और सामाजिक पुनर्जागरण के कारण महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिए संघर्ष किया। 20वीं शदी के प्रभातकाल में ही नारी शिक्षा के क्षेत्र में प्रगति दिखाई दी। 1919 में मांटेग्यू–चेम्सफोर्ड सुधारों के तहत दस लाख महिलाओं ने मताधिकार प्राप्त किया। हालांकि भारतीय महिलाओं ने पहली बार 1932 में मताधिकार का प्रयोग किया।

राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं के शामिल होने के क्रान्तिकारी आह्वान के साथ ही एक नये युग का उदय हुआ। आजादी की लड़ाई की अगुवाई करने वाली कुछ प्रमुख महिलायें थी। कमला देवी चटोपाध्याय, दुर्गाबाई देशमुख, सरोजिनी नायडू विजय लक्ष्मी पंडित, लक्ष्मी मेनन, वायलेट अल्वा, हसामेहता, मणीवेन पटेल एवं स्वरूपरानी आदि। स्वतन्त्रता संग्राम में महिलाओं की व्यापक भूमिका महत्वपूर्ण थी। 1942 के भारत छोड़ो आन्दोलन के दौरान जब सभी बड़े नेता गिरफ्तार कर लिये गये तब महिलाओं ने पुरुषो के साथ कंधे से कंधा मिलाकर संघर्ष को आगे बढ़ाया। अरुणा आसफअली, कल्पना जोशी, कनकलता बरुआ, रूपवती जैन और उषा मेहता 1942 के आन्दोलन की कुछ प्रसिद्ध नेत्रियाँ थी।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात नवनिर्मित भारतीय संविधान मे महिलाओं के लिए भी पुरुषो के समान राजनीतिक अधिकार सुनिश्चित किये गये संविधान द्वारा प्रदत्त राजनीतिक अधिकारों के अनुरुप ही राजनीतिक गति विधियों में महिलाओं की भागीदारी बढ़ी।

आधुनिकीकरण और शिक्षा के प्रसार के परिणामस्वरूप राजनीति में उनकी सक्रियता बढ़ी वे उच्च पदों पर आसीन होने लगी। देश को महिला समुदाय ने एक प्रधानमंत्री, अनेक मुख्यमंत्री, राज्यपाल, विधायक और राजदूत दिये है। अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं में अनेक महिलाओं ने देश का प्रतिनिधित्व किया। इन्दिरा गांधी, सरोजनी नायडू, विजयलक्ष्मील पंडित, सुचेता कृपलानी, राजकुमारी अमृतकौर आदि महिलाओं ने देश के सामाजिक राजनीतिक जीवन पर अमिट छाप छोड़ा है। इंदिरा गांधी ने तो प्रधानमंत्री के रूप में 17 वर्षो तक देश का सफल नेतृत्व किया और

सम्पूर्ण विश्व के समक्ष एक सफल राजनीतिज्ञ और कुशल प्रशासक का कीर्तिमान स्थापित किया। वर्तमान में सोनिया गांधी, सुषमा स्वराज, जयललिता, नजमाहेमतुल्ला, ममता बनर्जी, राबड़ी देवी, मायावती, मीराकुमार मेनका गाँधी, उमाभारती, बसुन्धरा राजे सिंधिया, रेणुका चौधरी आदि महिलाओं की सक्रिय एवं प्रभावशाली भूमिका रही है। लेकिन गिनती की दीपशिखाओं से धरती पर उजाला नहीं हो सकता। सम्पूर्ण परिदृश्य अब भी असंतोषजनक 1952 से आज तक लोकसभा में उनका प्रतिनिधित्व महज चार से आठ प्रतिशत रहा है। इसी तरह राज्य सभा में भी पुरुषों की तुलना में उनकी संख्या नगण्य रही है।

सत्ता की राजनीति में महिलाएं उपेक्षित है। निर्णय लेने वाली संस्थाओं में भी उनकी संख्या नगण्य है। मंत्रीमपरिषद् में स्थान पाने में इनी–गिनी महिलाओं को ही सफलता मिल जाती है। देश की पहली महिला प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी ने लगातार तीन लोकसभाओं का नेतृत्व किया किन्तु आश्चर्य की बात यह है कि उनकी मंत्रिपरिषद में भी कभी एक से अधिक महिला केबिनेट मंत्री नही रही। संसद विधानमंडलों और कार्यपालिका में महिलाओं की भागीदारी के लिए कोई सुविचारित और सुनिश्चित नीति नही है। इस दिशा में केन्द्र और राज्य सरकारो द्वारा जो भी कदम उठाये जाते है। उनका उद्देश्य महिलाओं की स्थिति में सुधार लाने के बजाय चुनाव में इस समुदाय का समर्थन हासिल करना होता है। लोकतान्त्रिक संस्थानों में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने के उद्देश्य से राष्ट्रीय परिदृश्य योजना (1998–2000) के तहत सभी राजनीतिक दलों से यह सुनिश्चित करने का आग्रह किया गया है कि उनके प्रत्याशियों में 30 प्रतिशत महिलाये हो। परन्तु दुर्भाग्य वश अब तक किसी भी राजनीतिक दल ने 30 प्रतिशत टिकट महिला प्रत्याशियों के लिए आरक्षित नहीं किया है।

आधारभूत स्तर पर पंचायती राज अधिनियम के द्वारा स्थानीय संस्थाओं में 33 प्रतिशत आरक्षण प्राप्त होने से देश की राजनीति में महिलाओं की भागीदारी के नये आयाम खुले है। अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व वाली राष्ट्रीय जनतान्त्रिक मोर्चे की सरकार ने संसद और राज्य विधानमंडलों की 33 प्रतिशत सीटे महिलाओं के लिए आरक्षित करने के लिए बहुप्रतिक्षित चौरासीवां संविधान संसोधन विधेयक (महिला आरक्षण विधेयक) सदन में प्रस्तुत कर एक सराहनीय कदम उठाया, लेकिन दलगत राजनीतिक स्वार्थपरता के कारण यह विधेयक अभी तक पारित नहीं हो सका है। कुल मिलाकर स्थिति यह है कि भारतीय संविधान तो महिलाओं के लिए राजनीतिक लोकतन्त्र की गारन्टी तो देता है, फिर भी उन्हे राजनीतिक रंगमंच पर स्थान नहीं मिल सका है।

जो थोड़ी बहुत महिलायें राजनीति के गलियारे में दिखाई पड़ती है वे वास्तव में राजनीति के 'पत्नी–बेटी–बहुवाद की देन ही होती है।

इस प्रकार स्वतन्त्रता के लगभग छः दशक बाद भी वास्तविक राजनीतिक प्रक्रिया में महिलाओं की भागीदारी नगण्य हैं। संविधान ने उन्हे पुरुषों के समान ही राजनीतिक अधिकार दिये हैं लेकिन इससे उन्हे देश की राजनीति में यथोचित स्थान नहीं प्राप्त हो सका है। महिलाओं के सम्बन्ध में किया जाने वाला कोई भी प्रयास तभी सार्थक हो सकता है जब स्वयं महिलायें अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों के प्रति जागरुक होगी तथा राजनीति के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करेंगी। विधान मंडलों में महिलाओं को आरक्षण देने के सरकारी प्रयास वास्तव में सराहनीय है, लेकिन महिलाओं के साथ न्याय तभी होगा जब नीति निर्णयन तथा सत्ता में उनकी समुचित भागीदारी सुनिश्चित हो।

भारतीय समाज आज भी परम्पराओं की जंजीरों से जकड़ा हुआ है। इन बंधनो ने महिलाओं को अब भी दोयम दर्जे की भूमिका निभाने को विवश कर रहा है। आज बदलाव की आवश्यकता है ताकि प्रचलित मूल्यों एवं व्यवहारों से ऊपर उठकर महिलाओं में राजनीति के प्रति दृढ़ संकल्प शक्ति का विकास हो सके। वर्तमान समाज में बढ़ती जागरुकता तथा शैक्षणिक परिवेश के कारण यह यथार्थ सत्य प्रतीत हो रहा है कि समय के साथ–साथ देश के सामाजिक–राजनीतिक परिवेश में बदलाव अवश्यंभावी है तथा राजनीति की मुख्यधारा में अधिक से अधिक महिलायें शामिल होंगी और राष्ट्र निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करेंगी।

राजेन्द्र प्रसाद गुप्ता
U.G.C. NET, J.R.F and Research Scholor